श्री श्री आनन्दमयी प्रसंग

प्रथम खण्ड

एवं

द्वितीय खण्ड

अमूल्यकुमार दत्तगुप्त

एम.ए.बी.एल.

(ढाका विश्वविद्यालय के लॉ विधि विभाग के अध्यापक)

हिन्दी रूपान्तर - **विश्वनाथ मुखर्जी**

श्री श्री आनन्दमयी संघ

प्रकाशक :
प्रथम संस्करण : 1982
श्री श्री आनन्दमयी चेरिटेबल सोसायटी, कलकत्ता

द्वितीय संस्करण : 2007
श्री श्री आनन्दमयी संघ, कनखल, हरिद्वार

प्रत : 1,000

मूल्य : 150.00 रुपये

मुद्रक :
मुद्रेश पुरोहित
सूर्या ऑफसेट, आंबली गाम, सेटेलाईट-बोपल रोड,
अमदावाद - 58 दूरभाष : (02717) 230112

निवेदन

श्री श्री मां आनन्दमयी प्रसंग एक सहज, प्रश्नोत्तर और घटनाक्रम में होने से सहजरुप से श्री श्री मां का उत्तर साधक के लिये, आध्यात्मिक पथ पर पथगामी बना सकता है - श्री अमुल्यकुमार दत्त समर्थ गुरु का आश्रित होने से, जीज्ञासु का सर्व प्रश्न करते है - और अनेक निगुढ प्रश्नो का विवरण प्राप्त होताा है - लेखक के जीवित काल में कुछ अंश प्रकाशित हुये थे ।

उनके बारे में मां ने कहा था "पिताजी गृहस्थ होते हुए इस बात की शिक्षा दे गये कि किस प्रकार भोग के भीतर निर्लिप्त रहा जा सकते है - संन्यासी जिस प्रकार कुटिया बनाता है, सत्कार्य के बीच बैठा रहता है, पिताजी उसी प्रकार बैठे थे । सत्कार्य पूर्ण होने के साथ-साथ अपने स्थान पर चले गयें - लज्जा, धृणा, भय तीनो बन्धन से मुक्त हो गये थे - तुम लोग विश्वास करो या न करो, यह शरीर सर्वथा साथ था ।"

सभी इस ग्रन्थ को अध्ययन से लाभान्वित होंगे ।

कार्तिक पूर्णीमा — **स्वामी भास्करानन्द**

२०६३ (५-११-२००६) — कनखल

आमुख

"श्री श्री माँ आनन्दमयी प्रसंङ्ग" एक पठनीय ग्रन्थ है । लेखक ढाका, काशी तथा अन्य अनेक स्थानों में लम्बे अर्से तक घनिष्ठ रूप में मातृसंग करने का सौभाग्य प्राप्त करके धन्य हुए हैं तथा मातृ कृपा से उक्त दुर्लभ सुयोग का सद्व्यवहार करने का सामर्थ्य प्राप्त कर चुके हैं । बाल्यकाल में सद्गुरु का आश्रय प्राप्त करने के कारण आपके चित्त में आध्यात्मिक जिज्ञासा उत्पन्न हुई थी । माँ के निकट वे नाना प्रकार के भावोद्दीपक प्रश्नों को उठाकर माँ के श्रीमुख से अनेक निगूढ़ बाते सुन चुके हैं । माँ के साथ हुई अनेक कथोपकथनों के यथायथ विवरणों को अपनी डायरी में लिखते रहे । उनके जीवितकाल में डायरी के कुछ अंश ढाका से पुस्तकाकार रूप में प्रकाशित हुए थे । उक्त पुस्तक के दोनों खण्डों के संस्करण आज से ४० वर्ष पूर्व समाप्त हो गये थे ।

अब उन दोनों खण्डों का द्वितीय संस्करण एक साथ प्रकाशित किया जा रहा हैं । ये ग्रन्थ मातृवाणी की अमूल्य संपदा हैं ।

श्री अमूल्य कुमार दत्त गुप्त प्रतिभावान छात्र थे तथा आगे चलकर ढाका में कानून की शिक्षा देने तथा कानूनी पुस्तकों के लेखन कार्य में पर्याप्त ख्याति प्राप्त कर चुके थे । अपने जीवन के अपराह्न काल में मातृ सान्निध्य में काशीवास करते रहे । सन् १९७३ ई. में अविमुक्त क्षेत्र वारानसी धाम में उनका देहान्त हो गया था ।

सुना है कि उनके सम्बन्ध में माँ ने कहा था - पिताजी गृहस्थ होते हुए इस बात की शिक्षा दे गये कि किस प्रकार भोग के भीतर निर्लिप्त रहा जा सकता हैं । संन्यासी जिस प्रकार कुटिया बनाता है, सत्कार्यों के बीच बैठा रहता, पिताजी भी उसी प्रकार बैठे थे । सत्कार्य पूर्ण होने के साथ-साथ अपने स्थान पर चले गये । लज्जा, घृणा, भय इन तीनों बन्धन से वे मुक्त हो गये थे । तुम लोग विश्वास करो या न करो, यह शरीर सर्वदा साथ था ।'' (आनन्द वार्ता, एकविंश वर्ष, प्रथम संख्या, पृष्ठ ७२)

फाल्गुन पूर्णिमा, **स्वामी परमानन्द**
माँ आनन्दमयी आश्रम, वृन्दावन

❐❐❐

प्रथम संस्करण की भूमिका

बंगला सन् १३३८ (१९३१) में श्री श्री माँ आनन्दमयी के साथ मेरा प्रथम परिचय हुआ । इस समय से लगभग एक वर्ष तक अविच्छिन्न भाव से उनका संग करने का सौभाग्य मुझे प्राप्त हुआ है । नित्य दो-तीन घण्टे हम आपस में बातें करते रहे । उन्हीं दिनों माँ के जीवन की छोटी-छोटी घटनाएँ और अमृततुल्य उपदेश सुनता रहा । लेकिन उन दिनों इन बातों को लिखने का कोई संकल्प मन में उत्पन्न नहीं हुआ था और न उसकी आवश्यकता अनुभव किया था । उन दिनों मैं बराबर यही सोचा करता था कि माँ ढाका में सर्वदा यहीं रहेंगी । उनका उपदेश बराबर प्राप्त करता रहूँगा । लेकिन फजली सन् १३३९ (१९३२) में हुए माँ के जन्मोत्सव के बाद माँ स्वर्गीय ज्योतिष बाबू और भोलानाथ को साथ लेकर अनिश्चितकाल के लिए ढाका नगर से चली गयीं । इन दिनों मैं माँ के अभाव की कमी तीव्र गति से महसूस करने लगा । हम लोगों के लिए उनकी लीला, उपदेश और संग करने का कोई उपाय नहीं रहा ।

इस घटना के दो साल बाद इनकम टैक्स के सहकारी कमिश्नर श्रीयुक्त शचीकान्त घोष महाशय अपने एक रिश्तेदार के यहाँ विवाह के अवसर पर ढाका आये । रमना के आश्रम में उनसे परिचय हुआ ।

उनकी जबानी पता चला कि वे कुछ दिन पूर्व मसूरी गये थे और वहीं माँ के साथ मुलाकात हुई थी । माँ के साथ उनकी यह पहली मुलाकात थी । लेकिन मैंने गौर किया कि वे माँ के प्रति विशेष रूप से आकृष्ट हुए हैं । माँ के साथ हुई मुलाकात के बारे में उन्होंने थोडा-सा वर्णन किया । उन्होंने कहा-मैंने माँ का संग करके जिस निर्मल आनन्द का उपभोग किया है और उनके बारे में जो अनुभव किया है, उसे लिखना चाहता हूँ ताकि उसे पढ़कर आप लोग भी उस आनन्द के भागीदार बन सकें । अगर आप लोग भी ऐसा ही करें तो हम परस्पर आपस की अभिज्ञता से लाभ उठा सकते हैं और हमें भी अपने विवरणों के आदान-प्रदान से आनन्द मिलेगा ।

शची बाबू का यह प्रस्ताव मुझे पसन्द आया । तभी से माँ की जबानी जो कुछ सुना था, नोट करने लगा । लेकिन इतने दिनों बाद उन बातों को लिखते समय देखा कि उनमें से अधिकांश को भूल गया हूँ । केवल जिन घटनाओं तथा उपदेशों ने मुझे प्रभावित किया था, उनकी स्मृति बनी है । इसमें कुछ गलतियां रह सकती हैं, यह सोचकर अपने मित्र श्रीयुक्त भूपतिनाथ मित्र की सहायता से माँ को सारी पाण्डुलिपि हृषिकेश में पढ़कर सुनायी । माँ ने इस रचना में कुछ परिवर्तन और सुधार करवाया । श्री शचीकान्त घोष महाशय के

उत्साह और सहयोग से बंगला सन् १३३८ से १३४१ तक श्री श्री माँ के सम्बन्ध में जिन घटनाओं और उपदेशों को, अपनी स्मृति पटल में उतार सका हूँ, वही इस पुस्तक के प्रथम परिच्छेद में हैं । १३३८ सन् बाद फिर लम्बे अर्से तक माँ का संग नहीं कर पाया था। बीच-बीच में लम्बे अवकाश के समय कई दिनों के लिए उनसे मुलाकात होती रही । इन दिनों जो कुछ बातें होती रहीं, उसे डायरी में नोट करता रहा और वे सारी बातें इस पुस्तक में प्रकाशित हैं । माँ के सभी उपदेशों को यथासम्भव उनकी भाषा में ही प्रकाशित हैं । उनके अतीत जीवन की जिन कहानियों को सुन चुका हूँ, उसे अतिरंजित बनाकर अलौकिकत्व आरोपित करने का एक भी प्रयत्न नहीं किया है । फिर भी पाठक यह अनुभव अवश्य कर लेंगे कि पुस्तक में वर्णित श्री श्री माँ की जीवनी में अधिकांश कुछ-कुछ अलौकिकत्व है । यह एक प्रकार से अनिवार्य है । जिनकी अनुभूति, स्थूल तथा सूक्ष्म की चिरन्तन सीमारेखा बिलकुल लुप्त हो गयी है, जो निस्त्रैगुण्य, नित्य निरंजन पद पर आरूढ रहकर अद्वय, अखण्ड चैतन्य स्थिति प्राप्त कर चुकी हैं, उनके कार्यकलाप हमारी स्थूल बुद्धि में अलौकिक तथा दुर्बोध ज्ञात हों तो इसमें आश्चर्य क्या है ? कारण मानव-शरीर त्याग करने पर कैवल्यधाम का अधिकार प्राप्त नहीं होता, इसीलिए माँ को मैंने

जितना देखा है ठीक उसी प्रकार का वर्णन किया है ताकि दूसरे लोग भी माँ की जीवनी और उपदेशों से अपना-अपना सिद्धान्त ग्रहण कर सकें । मेरा सिद्धान्त अन्य कोई ग्रहण करें, ऐसा आमन्त्रण भी नहीं दे रहा हूँ और न ग्रहण करने के लिए अपनी ओर से कोई तर्क पेश कर रहा हूँ। लोकोत्तर चरित्र स्वतः दुर्ज्ञेय होता है । श्री श्री माँ का चरित्र विशेष रूप से इतना सर्वतोमुख है, उसमें प्राकृत और अप्राकृतों का ऐसा समावेश है कि उसे कोई भी समग्र भाव से ग्रहण करके दूसरों के लिए बोधगम्य बना सकते हैं, ऐसा मेरा प्रत्यय नहीं हैं । माँ कौन हैं तथा क्या हैं, यह सवाल हमेशा अव्यक्त रह जायेगा । पर कुछ दिनों तक माँ का संग करने तथा उनमें ज्ञान, कर्म और भक्ति का सहजात समन्वय देखकर मेरे मन में यह दृढ विश्वास उत्पन्न हो गया है कि द्वापर के अन्त में कुरुक्षेत्र के मैदान में युद्धकामी राजन्यवर्ग द्वारा महा प्रलयंकर युद्ध प्रारम्भ होने के पूर्व जो महती वाणी भगवान् श्रीकृष्ण के मुख से निःसृत हुई थी, आज इतने दिनों बाद कलि के प्रदोष के कारण, वही वाणी जैसे मातृमूर्ति परिग्रह कर विश्व के कल्याण के लिए धराधाम में आविर्भूत हुई है ।

१ वैशाख, १३४५ सन् **श्री अमूल्य कुमार दत्तगुप्त**
६/१, बक्शी बाजार, ढाका.

❐❐❐